मारवाड़ चित्र शैली की उप शैलियों में बने लघु चित्रों का उद्‌भव, विकास एवं विस्तार

सारांश

राजस्थानी चित्रकला की मारवाड़ चित्र शैली में अनेक उप शैलियों का विकास व विस्तार हुआ। इनका विस्तार न केवल जोधपुर, बीकानेर, किशनगढ़, नागौर जैसे बड़ क्षेत्रों में हुआ बल्कि इस क्षेत्र के विभिन्न सामंतों, ठिकानों जैसे कि घाणेराव, कुचामन, मेड़ता, पाली, देसूरी, सांभर, जैसलमेर, लाडनूं, डीडवाना, खिंवसर, हससोलाव, भाउण्डा, परबतसर, नाडोल, अजमेर, सावर, भिनाय मसूदा तथा जूनिया में भी यह उप शैलियों के रूप में विकसित होती रही है। अतः यह स्पष्ट हो जाता है कि मारवाड़ के ठिकानों, सामंतों, जागीरदारों के यहाँ अनेक लघु चित्र बने थे जो कि मारवाड़ चित्र शैली के विकास एवं विस्तार में सहायक रही।

मुख्य शब्द : मारवाड़, उप शैलियाँ, लघु चित्र, ठिकाना, सांमत, जागीरदार, राव–उमराव, रियासत, राजदरबार, अपभ्रंश, ग्रंथचित्र, आलेखन, लोकशैली, रागमाला, भित्ति चित्र, चित्रषालाएँ, शिलालेख पट्टिकाएं।

पवन कुमार जाँगिड़
व्याख्याता,
चित्रकला विभाग,
राजकीय कन्या महाविद्यालय, पाली
(राजस्थान)

प्रस्तावना

मानव में कलात्मक प्रवृत्ति का उद्‌भव और विकास, स्वयं मानव जीवन के विकास के साथ–साथ हुआ। चित्रकला के अध्ययन से यह बात स्पष्ट हो जाती हैं। भारतीय चित्रकला में राजस्थानी चित्रकला का तथा राजस्थानी चित्रकला के इतिहास में मारवाड़ चित्र शैली का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। राजस्थानी चित्रकला का विकास एवं निर्माण राजस्थान के जितने भी प्रमुख प्राचीन नगर, राजधानियाँ, ठिकानों तथा धार्मिक और सांस्कृतिक प्रतिष्ठान हैं वहाँ चित्रकला पनपी और प्रतिष्ठित हुई तथा इसकी यह अटूट धारा अनेक रियासतों, शैलियों, उप शैलियों, ठिकाणा पेंन्टिग में प्लावित होती रही।

तिब्बती यात्री तारानाथ ने 7वीं सदी के प्रारम्भिक काल में मरू प्रदेश में श्री रंगधर नामक चित्रकार का उल्लेख किया था, जिससे हमें मारवाड़ में चित्रकला की पूर्व परम्परा होने का पता चलता है। मारवाड़ क्षेत्र से प्राप्त अपभ्रंश शैली के चित्रों के अवलोकन से पता चलता है कि पाली, जालौर, भीनमाल, नागौर आदि नगरों में ग्रंथों के चित्रण की परम्परा विद्यमान थी। इसके साथ ही मारवाड़ क्षेत्र जैन धर्म का भी प्राचीन केन्द्र रहा है तथा नागौर, जालौर, जोधपुर, बीकानेर, बवरेड़ा, उदयपर, पालम, जौनपुर, जैसलमेर, पाली और कुचामन आदि राजस्थान के वे स्थान रहे हैं जहाँ जैन चित्रों का आलेखन हुआ है।[1] जैन धर्म के प्रचार–प्रसार क लिए जैन अनुयायियों ने बडी संख्या में धार्मिक जैन ग्रंथों का चित्रण करवाया। साथ ही मारवाड़ में राजस्थान के अन्य केन्द्रों की अपेक्षा लोकशैली के चित्र अधिक बने।

10वीं शताब्दी से 15वीं शताब्दी तक मारवाड़ प्रदेश में कलात्मक गतिविधियाँ समुचित रूप से विकसित थी तथा सहस्त्रों की संख्या में यहाँ जैन तथा वैष्णव साहित्यिक कृतियों का चित्रण हुआ। इस युग के अनेक सचित्र ग्रंथ मिलते हैं, वे एक ऐसी अपभ्रंश शैली के हैं जिसका प्रचलन समस्त भारत में था। मारवाड़ के महावीर मंदिर से मिले सचित्र पट्ट को देखकर यह प्रमाणित हो जाता है कि मारवाड़ एवं गुजरात दोनों ही प्रदेशों में एक साथ व्यापक स्तर पर एक ही शैली (अपभ्रंश शैली) में जैनधर्मी चित्र बन रहे थे। वैसे इस क्षेत्र से 13वीं शताब्दी के पट्ट काफी संख्या में प्राप्त हुए जिन पर मारवाड़ शब्द अंकित है। मुगल तथा स्थानीय अपभ्रंश शैली के समागम से उत्पन्न एक स्वतंत्र शैली का विकास हुआ जिसे हम जोधपुर या मारवाड़ शैली के नाम से जानते हैं। जोधपुर, बीकानेर, किशनगढ़, नागौर एवं इस क्षेत्र के विभिन्न सामंतों, ठिकानों जैसे कि घाणेराव, कुचामन, मेड़ता, पाली, देसूरी, सांभर, जैसलमेर तथा अजमेर में विकसित होने वाली कला मारवाडी चित्रकला के नाम से जानी जाती है, जो अनेक शैलियों और उप शैलियों में समय–समय पर अपना विकास पाती रही

है। इस प्रकार हम देखते हैं कि अब तक मारवाड़ चित्र शैलनविस्तार न केवल जोधपुर, बीकानेर,के विभिन्न सामंतों, ठिकानों जैसे कि घाणेराव, कुचामन, मेड़ता, पाली, देसूरी, सांभर, जैसलमेर तथा अजमेर में भी यह उप शैलियों के रूप में विकसित होती रही है। इन विभिन्न स्थानों, सामंतों, ठिकानों पर बने चित्रों को प्रकाश में लाना ही इस शोध–पत्र का मुख्य उद्देश्य है।

मारवाड़ चित्र शैली का सूत्रपात 17वीं शताब्दी के प्रारम्भिक काल से हुआ माना जाता है। कुमार संग्राम सिंह के संग्रह में सन् 1623 में निर्मित एक रागमाला चित्रावली है जो कि पाली के प्रसिद्ध वीर विठ्ठलदास चम्पावत के लिए चित्रित की गयी थी। मारवाड़ शैली का इससे पूर्व का काई भी चित्र उपलब्ध नहीं माना जाता है। अतः यह माना जाता है कि मारवाड़ चित्र शैली का सूत्रपात 17वीं शताब्दी के प्रारम्भिक काल में हुआ। मारवाड़ क्षेत्र, गुजराती एवं जैन कलात्मक गतिविधियों का एक प्रमुख केन्द्र रहा था। मारवाड़ जोधपुर, पाली, नागौर जैसे अन्य स्थानों पर ही 17वीं से लेकर 19वीं शताब्दी तक चित्रकला की अनेक उप–शैलियों का विकास हुआ। इनमें से जोधपुर, मारवाड़ चित्रकला शैली का सर्वाधिक महत्वपूर्ण केन्द्र था। नेशनल म्यूजियम, नई दिल्ली, कुं. संग्रामसिंह जयपुर के व्यक्तिगत संग्रह एवं जोधपुर महाराजा के निजी संग्रह उमेद भवन में मारवाड़ शैली के अधिकांश चित्र हैं। मारवाड़ शैली की विस्तृत विवेचना के लिए जोधपुर महाराजा के निजी संग्रह के चित्र अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

मारवाड़ शैली के ही एक अन्य केन्द्र नागौर में हमें विभिन्न विषयों के लघु चित्रों के साथ–साथ सुस्पष्टतः भव्य शैली में बने अनेक महत्वपूर्ण व्यक्ति–चित्र भी मिलते हैं।[2] नागौर के प्रारम्भिक ग्रन्थ चित्रों में मारवाड़ की तत्कालीन प्रचलित पश्चिमी भारतीय चित्र शैली में विकास वाले आधारों का चित्रण देखने को मिलता है जिनमें अपभ्रंश वाली बाहर की ओर निकली आँख एवं सवा चश्म चेहरे के स्थान पर सामने की मुद्रा में आकृतियाँ बनने लगी थी। इस प्रकार के चित्र प्रतिहार काल में निर्मित हुए थे। संभवतः ऐसी आकृतियों का निर्माण नागौर या आस–पास के क्षेत्रों में हुआ था। नागौर की चित्रण परम्परा में पठान शासन काल के विकास वाले आधारों का चित्रण भी दिखाई देता है जिसका विस्तृत वैभव विशेषतः महाराज बख्तसिंह कालीन भित्ति चित्रों में देखा जा सकता है। इसके अतिरिक्त यहाँ की चित्रण परम्परा का विस्तार हमें लाडनूं, मेड़ता, डीडवाना, कुचामन में भी मिलता है। नाडोल में अवस्थित एक जैन मंदिर में लगभग 1605 में निर्मित एक भित्ति चित्र उपलब्ध होने का उल्लेख भी मिलता है।[3]

मध्यकाल में पश्चिमी भारतीय चित्रकला के विकास के अनुरूप नागौर भी मारवाड़ का एक प्रमुख ठिकाना रहा है। जहाँ जैन धर्म के सन्तों, श्रेष्ठियों एवं सूफी सन्तों की समन्वित संस्कृति के फलस्वरूप यहाँ को कला का विस्तार हुआ। 15वीं सदी में नागौर में खानजादा शासकों ने सूफीमत के अनुकरण में धार्मिक सहिष्णुता की नीति को अपनाया जिससे इस क्षेत्र में अनेक सचित्र ग्रन्थों का निर्माण हुआ। स्थानीय शासक सम्स खाँ एवं उनके वंशजों के शासन काल में इस क्षेत्र की कला संस्कृति का विकास होता रहा। सम्स खाँ के शासन काल में सचित्र ग्रन्थ पांडव पुराण की रचना हुई थी तथा इस समय के अन्य सचित्र ग्रन्थों में कल्पसूत्र एवं कालकाचार्य कथा भी प्रमुख रहे हैं। 15वीं, 16वीं सदी में ही श्वेताम्बर सम्प्रदाय में कल्पसूत्र लेखन एवं चित्रण का कार्य विशष रूप से हुआ। इसके साथ ही नागौर के स्थानीय खानजादा शासकों एवं जैन सूफी संस्कृति के फलस्वरूप चित्रकला में अनेक परिवर्तन दिखाई पड़ते हैं।

मुगलों के शासन काल में नागौर क्षेत्र में जहांगीर कालीन चित्रकला का प्रभाव महाराजा बख्तसिंह कालीन राजप्रासादों के भित्ति चित्रों में देखने को मिलता है। ई. 1724 से 1740 के बीच महाराजा ने नागौर दुर्ग में भित्ति चित्रांकन करवाया था। अतः नागौर शैली का सही और सर्वाधिक स्वरूप इन्ही राजप्रसादों के भित्ति चित्रों में देखा जा सकता है। कुंवर संग्राम सिंह संग्रहालय जयपुर में 1720 ई. के ठाकुर इन्द्र सिंह के लघुचित्र से नागौर की चित्रकला में भिन्न भिन्न कलातत्वों का चित्रण देखने को मिलता है। इन भित्ति चित्रों के मिलने से मारवाड़ के ज्ञात भित्ति चित्रों का क्रमबद्ध इतिहास शुरू होता है।

राठौड़ों के शासन काल में नागौर क्षेत्रीय चित्रकला राठौड़ चित्र शैली कहलायी। इस काल में जहाँ जैन चित्रकला ग्रंथों का चित्रण होता रहा वहीं भित्ति चित्रण का कार्य भी होता रहा।[4] इस प्रकार 1700 से 1750 ई. के मध्य न केवल नागौर ठिकाने में लघु चित्र बने बल्कि मारवाड़ के सभी ठिकानों में चित्रण कार्य होने के उल्लेख मिलते हैं। नागौर क्षेत्र की कला के अनेक सन्दर्भ हमें जैन प्रबन्ध काव्य में मिलते हैं जिनमें कुचेरा नामक स्थान के प्राचीन उल्लेखों के अनुरूप तत्कालीन श्रेष्ठी द्वारा बनवाए अनेक भित्ति चित्रों का कलात्मक वर्णन भी मिलता है।[5]

चूंकि नागौर शैली में जोधपुर, बीकानेर, अजमेर, मुगल और दखनी शैली का मिला–जुला प्रभाव है। फिर भी उस समय के यहाँ बने लघु चित्रों में तत्कालीन जोधपुर एवं बीकानेर से हटकर मौलिक कला तत्वों का चित्रण कार्य हुआ। हालांकि उस समय के चित्रों पर मुगल प्रभाव अधिक रहा तथापि बीकानेर नागौर में इस काल में निर्मित चित्रों में कुछ समानता भी मिलती है फिर भी महाराजा बख्तसिंह की कलाभिरूचि के कारण यहाँ के चित्र मौलिक बन पड़े हैं जो तत्कालीन भित्ति चित्रों में देखे जा सकते हैं।

मारवाड़ के दरबार में महाराजा विजय सिंह के साथ–साथ अन्य सामंतों ने भी चित्रकला को प्रश्रय दिया था। महाराजा विजय सिंह के समय से ग्रन्थों के चित्रण पर जोर दिया जाने लगा। हालांकि मारवाड़ चित्रशैली का प्रमुख केन्द्र तो जोधपुर था परन्तु इसके कई ठिकानों में भी कला को संरक्षण देने एवं मारवाड़ चित्र शैली के विस्तार को बढ़ाने में सहायक रही है। इन ठिकानों में उत्कृष्ट चित्र बन रहे थे। अतः विजयसिंह के काल में नागौर के आस–पास के ठिकानों के चित्रों में भी यहाँ की चित्र शैली के विस्तार को देखा जा सकता है। नागौर की चित्रण परम्परा का विस्तार इस क्षेत्र के विभिन्न चित्रण केन्द्रों में होता रहा है। इस प्रकार नागौर, कुचामन और

जालौर भी चित्रकला के विकास के केन्द्र बन गये थे। इन केन्द्रों में सचित्र ग्रन्थों, लघु एवं भित्ति चित्रों में नागौर की चित्रण परम्परा का निर्वाह देखने को मिलता है। मेड़ता, खिंवसर, हससोलाव, लाडनूं, भाउण्डा, डीडवाना, कुचामन, परबतसर इत्यादि महत्वपूर्ण ठिकाने रहे हैं जिनमें ठाकुरों एवं श्रेष्ठियों ने चित्रकला को प्रश्रय देते हुए बाहर से चित्रकारों को बुलाकर चित्रण कार्य करवाया जिससे यहाँ के चित्रों पर बाहरी प्रभाव भी दिखाई पड़ता है। इन चित्रकारों ने आश्रयदाता की कलाभिरूचि एवं व्यक्तिगत विशेषताओं के अनुरूप ही चित्रण किया है। इस प्रकार नागौर में सचित्र ग्रन्थों, लघु चित्रों तथा भित्ति चित्रों की परम्परा का विस्तार होता रहा तथा कालान्तर में यह परम्परा सामन्तों, ठाकुरों, धनिकों के यहाँ भी देखने को मिली।

महाराजा अजीतसिंह के शासन काल में बने अनेक चित्र उपलब्ध हैं जो अधिक सुन्दर व प्राणवान हैं। इनका शासन काल भी कला की दृष्टि से विशेष उल्लेखनीय रहा। महाराजा अभय सिंह स्वयं बड़े कला प्रेमी थे। उन्होंने सबसे पहले कलाकारों को प्रेरणास्पद राजकीय संरक्षण प्रदान किया था। इनके समय में भी सामन्तों के चित्र बनाने का उल्लेख मिलता है।[6] लन्दन की मैग्स कम्पनी ने ठाकुर हरनाथसिंह की शबीह जो स्याह कलम में है को नीलाम किया था।[7] इसी प्रकार ठाकुर जगन्नाथसिंह का चित्र तिथियुक्त है जिससे मारवाड़ शैली के विकास को समझने में सहायता मिलती है। डॉ. मधुप्रसाद अग्रवाल ने ऐसे कई चित्रों का उल्लेख किया है जैसे कि सेवक के साथ बैठा राजा, ठाकुर विरमदेव एवं दिजामसिंह इत्यादि। इन उल्लेखों से प्रतीत होता है कि इस काल में राजाओं के साथ–साथ सामन्तों के व्यक्ति चित्र बनाने को महत्व दिया जाने लगा। महाराजा मानसिंह के समय चित्रकला की अभूतपूर्व उन्नति हुई तथा हजारों वृत्त चित्र बने। कई ग्रन्थों को चित्रित किया गया तथा कथाओं से सम्बन्धित चित्र पट्ट बनाये गये। महाराजा मानसिंह के शासन काल में मारवाड़ शैली का अन्तिम चरण था। इस समय जोधपुर शैली में सर्वाधिक चित्र बने। जिसके फलस्वरूप सामन्तों ने कुचामन, घानेराव, नागौर, पाली, जालौर इत्यादि प्रमुख नगरों में चित्रशालाएँ बनवायी थी जहाँ सहस्त्रों की संख्या में चित्र बनाये गये।[8] इस प्रकार महाराजा मानसिंह के समय कला के राजकीय मान को देखकर सामन्तों ने भी कला को प्रोत्साहित किया तथा केवल जोधपुर में ही नहीं वरन् सारे मारवाड़ व इनके सभी ठिकानों में इस युग में चित्र बने। इस प्रकार ललित कलाओं के विकास में यहाँ के राजा–महाराजा, राव–उमराव, जागीरदारों, अमीरों आदि का अत्यधिक योगदान रहा है। इनमें से कई स्वयं इन कलाओं के पारखी और मर्मज्ञ थे। इन उल्लेखा से स्पष्ट होता है कि मारवाड़ के ठिकानों, सांमतों, जागीरदारों के यहाँ अनेक लघु चित्र बने थे।

इस क्षेत्र में 17वीं सदी से 19वीं सदी के अन्त तक के प्रर्याप्त संख्या में लौककला शैली के चित्र मिलते रहे हैं। मारवाड़ के शासकों ने ही चित्रकला को प्रश्रय नहीं दिया वरन् मारवाड़ के ठिकानों में भी सांमतों के दरबार में उत्कृष्ट चित्र बने थे। ये चित्र लौक शैली के साथ–साथ दरबारी शैली में हैं। इन क्षेत्रों में तत्कालीन शिल्प के साथ ही भित्ति चित्रण एवं हस्तशिल्प ग्रन्थों के साथ ही लघु चित्रों का निर्माण भी होता रहा। जोधपर के ठिकानों जैसे कि नागौर, घाणेराव एवं कुचामन आदि स्थानों पर भी चित्रों के उल्लेखनीय उदाहरण मिलते रहे हैं।[9]

मारवाड़ के घाणेराव ठिकाने से 18वीं सदी के अत्यन्त महत्वपूर्ण लेखयुक्त चित्र मिलते रहे। यहाँ के रागमाला चित्र कुंवर संग्रामसिंह के निजी संग्रह म हैं। जिसको कुछ विद्वान दक्कन में चित्रित एवं कुछ घाणेराव में चित्रित मानते हैं। गौड़वाड़ के सीमावर्ती ठिकानों में नाडोल, देसूरी व घाणेराव कला के महत्वपूर्ण केन्द्र रहे हैं। घाणेराव में राव दुर्जनसिंह के संरक्षण में चित्रकार नारायण को उचित प्रोत्साहन मिला जिससे यहाँ की मौलिक चित्रण पद्धति का विकास हुआ । यहाँ चित्रकार नारायण, छज्जू एवं कृपाराम ने नवीन चित्र शैली का निर्माण किया जिससे घाणेराव को मारवाड़ की एक उपशैली के रूप में महत्व मिला। 1775 ई. में यह केन्द्र मारवाड़ के आधिपत्य में आ गया। घाणेराव के शासक 1771 ई., घाणेराव शासक अजीतसिंह, बाघों के बाग में 1809 ई., जालन्धर जी व सवाई मानसिंह 1825 ई. इत्यादि अनेक ऐसे महत्वपूर्ण चित्र हैं जो मारवाड़ की चित्रकला में नवीनता का एहसास कराते हैं।[10] घाणेराव के ठाकुर पद्मसिंह का व्यक्ति चित्र कृपाराम नामक चित्रकार ने हो बनाया। घाणेराव ठिकाने से अठारहवीं सदी के प्रारम्भ में चित्रकार छज्जू एवं कृपाराम की बनायी महत्वपूर्ण कृतियां मिलती हैं। अठारहवीं सदी के उत्तरार्द्ध में बीकानेर के चित्रकार भी घाणेराव ठिकाने में गये। अतः सिद्ध होता है कि घाणेराव ठिकाने में स्थापित चित्रषाला थी जहां बीकानेर जैसे महत्वपूर्ण केन्द्र से चित्र गये। घाणेराव के चित्र प्रचुर संख्या में कुंवर संग्रामसिंह, जयपुर के निजी संगह में हैं। मुख्य रूप से शबीह एवं दरबार के चित्र हैं।

मेड़ता भी मध्यकाल में जैन धर्म का प्रमुख केन्द्र रहा जहाँ अनेक ग्रन्थ चित्र बने। जिससे यहाँ कई सचित्र ग्रन्थों एवं विज्ञप्ति पत्रों का चित्रण कार्य हुआ। मेड़ता में 1672 ई. में समय सुन्दरकृत प्रियमेलक चौपाई ग्रन्थ का चित्रण हुआ। जिसमें 24 चित्र बने है। मेड़ता घराने के चित्रकार जोधपुर तथा बीकानेर दोनों ही राज्यों के चित्रण कार्यों में तत्पर रहने क उल्लेख मिलते हैं। इसी प्रकार जैसलमेर में असंख्य शिल्प व सचित्र कृतियों का निर्माण हुआ। 15वीं शताब्दी में जैसलमेर, खेड़, मालाणी आदि क्षेत्रों में सचित्र कल्पसूत्रों का चित्रण भी हुआ। ये चित्र पश्चिमी भारतीय चित्रशैली का प्रतिनिधित्व करते हैं। जैसलमेर के महारावल बरीसाल ने चित्रकला को सदैव प्रोत्साहित किया उसके राजदरबार में अनेक कलाकारों को प्रश्रय प्राप्त था। परिणामतः 19वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में जबकि राजस्थान के सभी रजवाड़ों में चित्रकला का हास हो रहा था ऐसे समय जैसलमेर राज्य चित्रकला की दृष्टि से समृद्धि की ओर अग्रसर हो रहा था। पाली और खीवदा ठाकुर के घराने में चित्रित विट्ठलदास के एक पुत्र सोनम का व्यक्ति चित्र तथा

नवलसिंह के दरबार के चित्रों ने जोधपुर शैली पर अपना स्थाई प्रभाव छोड़ा है। ये चित्र कुंवर संग्रामसिंह के संग्रह में हैं। किशनगढ़ के समीपस्थ अजमेर, सावर, भिनाय तथा मसूदा, जूनिया जैसे ठिकानों की कला समय–समय पर पल्लवित और पुष्पित होती रही है जिसमें मरू प्रदेश की सांस्कृतिक झलक कूट–कूट कर भरी हुई है। इस दृष्टि से मरू प्रदेश की चित्रकला राजस्थानी चित्रकला में अपना महत्वपूर्ण स्थान रखती है। कुंवर संग्रामसिंह क निजी संग्रह में उपलब्ध अनेक लघचित्र इस बात के साक्षी है। मेवाड़ शैली के अनुरूप, लोक कला की कुछ विशेषताएँ लिए **सावर** ठिकाने में भी गोपाल–कृष्ण के समूह चित्रों का अंकन हुआ है। राष्टीय संग्रहालय दिल्ली तथा कु. संग्रामसिंह के संग्रहालय में 'इन्द्र प्रकोप' नामक चित्र इस उप शैली का अनुपम उदाहरण है।[11] अतः यह सिद्ध होता है कि घाणेराव, कुचामन इत्यादि में स्थापित चित्रशालाओं में लघु चित्र बनते थे। घाणेराव ठिकाने में स्थापित चित्रशाला में तो बीकानेर जैसे महत्वपूर्ण केन्द्र से चित्र भेजने के उल्लेख भी मिलते हैं।[12]

मारवाड़ (जाधपुर) राज्य के इतिहास के अनुसार जोधपुर के महाराजा अभयसिंह ने वि.सं.1784 (1727 ई.) में जालिमसिंह मेड़तिया को कुचामन की जागीर प्रदान की।[13] इस प्रकार यह भू–भाग जोधपुर रियासत के अधीन हो गया। कुचामन में चित्रशाला का होना तथा सहस्त्रों की संख्या में चित्र बनने का उल्लेख मिलता है।[14] इससे यह सिद्ध होता है कि यहाँ प्राचीन समय से ही चित्रण की परम्परा रही है। डीडवाना, मंगलाना, दौलतपुरा, खाटू, खिंवसर, सुदरासन, डीडवाना, मारोठ, किशनगढ़ जैसे कलात्मक स्थलों के मध्य स्थित कुचामन में कलात्मक कार्य न हो ऐसा हो नहीं सकता। डीडवाना से प्राप्त योग नारायण की बैठी हुई मूर्ति तथा आठवीं शताब्दी में मंगलाना गाँव के निवासी जेद्दुक के पुत्र दद्दुक की पत्नी लक्ष्मी द्वारा कालिंजर में एक सुन्दर उमा महेश्वर पट्ट लगवाने की जानकारी मिलती है। जिससे कुचामन–नागौर क्षेत्र में उन्नत चित्रकला की स्थिति का अनुमान होता है। इसी क्रम में शिकार और सवारी के कुछ सुन्दर लघ चित्र जोधपुर सिटी पैलेस में भी संग्रहित है जिसमें गुलाब सागर की ओर महाराजा की सवारी का दृश्य है जिसमें निमाज, पोकरण और आसोपा के जागीरदारों का अंकन मिलता है। यहाँ के एक अन्य चित्र महाराजा की सवारी का है, जिसमें उनके साथ कुचामन, भाद्राजूण, भैंसवाड़ा के जागीरदार सिंघी इन्द्रनाथ आदि को दिखाया है।[15] यह चित्र भी कुचामन क्षेत्र में चित्रकला की परम्परा के प्रचलन की पुष्टि करता है। यहाँ लघु चित्रों के साथ ही भित्ति चित्रण होता रहा तथा राजमहलों के अतिरिक्त सामान्य लोगों को भी चित्रकला में अभिरूचि रही थी। कुचामन तो चित्रकला के विकास केन्द्रों में से एक रहा है। इसलिए विविध विषयों के लघु चित्रों का संग्रह श्री महाराजा जोधपुर के पास है और कुचामन के ठाकुर तथा आसोपा के ठाकुर भी अपने चित्रों के संग्रह के लिए विख्यात रहे हैं।[16] जिनके संग्रह में लघु चित्रों का संग्रह इस तथ्य को प्रमाणित करता हैं यहाँ ऐसे अनेक मौलिक चित्र बने हैं जो मारवाड़ चित्र शैली के विस्तार व परम्परा की कहानी को बयां करते हैं। कुचामन ठाकुर केशरी सिंह चित्रकला प्रेमी था जिसने लघु चित्रों के साथ–साथ अनेक भित्ति चित्र भी बनवाये थे। जिसके प्रमाण कुचामन महल, चारभुजा मंदिर से प्राप्त भित्ति चित्र है। ये चित्र कुचामन ठाकुर केशरी सिंह के समय में बने हैं क्योंकि केशरी सिंह सन् 1857 में यहाँ के ठाकुर बने थे। कुंवर संग्रामसिंह संग्रह में राव केशरी सिंह (1857) का लघु चित्र है।[17] सर्वेक्षण के दौरान मुझे यहाँ के चार भुजा मंदिर के शिलालेख पर संवत् 1934 (ई. 1876) तथा ठाकुर केशरी सिंह के नाम का उल्लेख मिला है जिसके अनुसार चारभुजा मंदिर का निर्माण कुचामन ठाकुर केशरी सिंह के समय का है। इस प्रकार ठिकाना शासका ने विशाल एवं भव्य राजप्रासाद निर्मित करवाकर कालान्तर में उन्हें विविध चित्रों से अलंकृत भी करवाया जो कि उनके कला प्रेम की अनूठी मिशाल है। कुचामन महल में अनेक लघु चित्र बने थे जिनके कलात्मक महत्व एवं उपयोगिता को न समझ पाने के कारण बेच दिये गये तथा स्थानीय जनता एवं पर्यटक अपने साथ ले गये। इसी प्रकार कुचामन में श्री विलासीराम जी की बगीची है जिसमें श्री हरिदास जी दयाल का लघु चित्र देखने को मिलता है जिसमें एक देवी, सिंह, हाथी व एक राजा या महाजन का चित्रण है। कुचामन के रघुनाथ मंदिर के शिलालेख पर वि.सं. 1630 अंकित है। सीताराम जी के इस मन्दिर में भित्ति चित्र होने का उल्लेख मिलता है।[18] लेकिन वर्तमान में मंदिर का जीर्णोद्धार करवाकर दुबारा चित्रांकन करवाया गया है। मंदिर के पुजारी के पास कुछ प्राचीन लकड़ी की पट्टिकाएं व लेखयुक्त कागज देखने को मिले। जिन पर रिद्धी सिद्धी सहित गणेश जी की आकृती तथा निमन्त्रण–पत्र पर लेख का अंकन भी देखने योग्य है। मारोठ एवं कुचामन के अनेक चित्रकार अपने कला कार्य के लिए प्रसिद्ध रहे हैं। मारोठ कला घराना पिछले 500 वर्षों से पीढ़ी दर पीढ़ी आज भी कलाकारी का कार्य कर रहे हैं। वास्तव में तो मारवाड़ स्कूल वृहद मरू प्रदेश में विस्तार पाया हुआ चित्रकला का ऐसा अगाध सागर है, जिसकी अनेक शैलियां और उपशैलियां शोध के आधार पर खोजी जा सकती हैं। जैसलमेर, सिरोही, पाली, नागौर, घाणेराव, कुचामन आदि की चित्र पद्धति पर विस्तार से कार्य होने की गुजांइश हैं।

सन्दर्भ – ग्रन्थ सूची

1. गोस्वामी, प्रेमचन्द राजस्थान की लघुचित्र शैलियां, जयपुर, 1972, पृ.सं. 40
2. सिंह, चन्द्रमणि, राजस्थान की सांस्कृतिक परम्परा, जयपुर, 2000, पृ.स. 2
3. गोस्वामी, प्रेमचन्द राजस्थान की लघुचित्र शैलियां, जयपुर, 1972, पृ.सं. 47
4. मत्तड, संतोष कुमार नागौर का ऐतिहासिक व सांस्कृतिक अध्ययन (अप्रकाशित शोध ग्रन्थ), जयपुर, 2002, पृ.सं. 318
5. सोमानी, रामवल्लभ पृथ्वीराज चौहान एण्ड हिज टाईम्स, जयपुर, 1981, पृ.सं. 149

6. राठौड़, गोविन्द सिंह मारवाड़ की सांस्कृतिक धरोहर, जोधपुर, 1990, पृ.स. 188
7. अग्रवाल, मधु प्रसाद मारवाड़ की चित्रकला, दिल्ली, 1993, पृ.सं.76
8. पान्डे, राम राजस्थान का सांस्कृतिक इतिहास, जयपुर, 2000, पृ.स. 76
9. अग्रवाल, मधु प्रसाद मारवाड़ की चित्रकला, दिल्ली, 1993, पृ.सं. 200
10. वशिष्ट, धर्मवीर मारवाड़ की चित्राकंन परम्परा एवं चित्रकार, जयपुर, 2011, पृ.स. 49
11. राठौड़, गोविन्द सिंह मारवाड़ की सांस्कृतिक धरोहर, जोधपुर, 1990, पृ.स. 195
12. अग्रवाल, मधु प्रसाद मारवाड़ की चित्रकला, दिल्ली, 1993, पृ.सं. भूमिका।
13. गुप्ता, मोहनलाल नागौर का राजनीतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास, जोधपुर, 2010, पृ.सं. 269
14. गोस्वामी, प्रेमचंद राजस्थान की लघुचित्र शैलियां, जयपुर, 1972, पृ.सं.48
15. शाह, रतन सांस्कृतिक राजस्थान में श्री रामवल्लभ सोमानी का एक लेख, कलकत्ता, 1982, पृ.सं. 178
16. गुप्ता, बेनी राजस्थान का इतिहास, जयपुर ,1998, पृ.सं. 34
17. वशिष्ट, धर्मवीर मारवाड़ की चित्राकंन परम्परा एवं चित्रकार, जयपुर, 2011, पृ.स. 93
18. अग्रवाल, आर. ए. मारवाड़ म्यूरल्स, दिल्ली, 1977, पृ.सं. 34